ISSN : 2230-3022

माटी

प्रगतिशील चेतना की संवाहक त्रैमासिकी

सम्पादक : सुधा त्रिपाठी

अंतर्लय का विन्यास
गगन गिल पर एकाग्र

अतिथि सम्पादक
ब्रजरतन जोशी

माटी

प्रगतिशील चेतना की संवाहिकी पत्रिका

अंक : 20, (सन् 2023), ISSN : 2230-3022

प्रधान संपादक : **नरेन्द्र पुण्डरीक**
डी.एम.कॉलोनी, सिविल लाइन, बाँदा-210001 (उ.प्र.)
मो. 94501-63568, 8986-47444, मेल : pundriknarendra549k@gmail.com

संरक्षक
डॉ. रामचन्द्र सरस

सम्पादक मण्डल
कुसुमलता सिंह
प्रो.शान्ति नायर
डॉ. सबीहा रहमानी
श्रीधर मिश्र
डॉ. शशिभूषण मिश्र

संपादक : **डॉ. सुधा त्रिपाठी**
असिस्टेन्ट प्रोफेसर, हिन्दी विभाग
केन्द्रीय विश्वविद्यालय, इलाहबाद,
प्रयागराज।
मो. 63068-60744
मेल: sudhaslink@gmail.com

अतिथि संपादक : **ब्रजरतन जोशी**
मो. 9414020840
मेल: drjoshibr@gmail.com

शब्द सज्जा : **किशनकुमार व्यास**
मो. 9410103100

लिटिल बर्ड पब्लिकेशंस
4637/20, शॉप नं. एफ-5, प्रथम तल,
अंसारी रोड, दरियागंज, नई दिल्ली-110002
मो. 9968288050
मेल: littlebirdinfo21@gmail.com

सदस्यता राशि भेजने के लिए : **माटी पत्रिका**
बैंक : **यूनियन बैंक,** बांदा शाखा, बांदा-210001
खाता संख्या : 380401010034627
IFSC Code : UBIN0538043

- सम्पादन, प्रबन्ध सम्पादक पूर्णत : अवैतनिक
- रचनाओं की जिम्मेदारी लेखकों पर
- विधिक विवादों के लिए बबेरू कोर्ट
- आजीवन/वार्षिक सदस्यता के लिए सम्पादक/ प्रबन्ध सम्पादक/संरक्षक को पत्र लिखें।
- सम्पर्क : ग्राम एवं पोस्ट-कमासिन, बेबरू, जिला बांदा (उ.प्र) 210001
मो. 91255-01293

प्रकाशन सहयोग : **रज़ा फाउण्डेशन**

माटी के अंकों में प्रकाशित सामग्री के उपयोग के लिए न्यास/ प्रबंध संपादक की अनुमति अनिवार्य है।

यह अंक : **300/-** एक प्रति वार्षिक- 400/- आजीवन 5000/-

शुभाशया

समदोंग रिनपोछे 15

विचार व्यूह

थेरी की वापसी
राधावल्लभ त्रिपाठी 18

भावोत्कट मौन की कविता
सितांशु यशश्चन्द्र 34

अवाक् का वाक्-वैभव
रमेशचन्द्र शाह 40

घेरा ज्यों ध्यान स्थल का
प्रयाग शुक्ल 48

गगन से उतरी शब्द गंगा
नर्मदाप्रसाद उपाध्याय 52

रूपान्तरण का अजब अनुभव
रंजना अरगड़े 73

विपश्यना गद्य
शंपा शाह 87

परी के पंख ही परी थी !
राजाराम भादू 97

स्त्री और कविता के सत्य की पहचान
विपिन चौधरी 103

लिखी पहुँचेगी ज़रूर एक दिन
आशुतोष दुबे 110

भारतीय कविता की हन्ना आरेंट
अश्विनी कुमार 113
अंग्रेज़ी से अनुवाद : मधु बी जोशी

अपने ही काठ पर लेटा हुआ शव अपना
अमरेन्द्र कुमार शर्मा 121

लौटना पड़ता है फिर इसी संसार में
अच्युतानंद मिश्र 129

उसी ने मूक किया था, दी उसी ने वाणी
श्रुति गौतम 142

आन्तरिक लय की तलाश में
रिज़वानुल हक 152

बाहर उतना ही अँधेरा है जितना भीतर
ज्योतिष जोशी 159

शब्दातीत का आलोक
चन्द्रकला त्रिपाठी 167

स्मृति, इतिहास और स्वप्न का वर्तमान
रूबल 177

एक अनोखा कविता-संसार
कुशल राजेश्री-विपिन खन्धार 188

अन्तर आकाश

आज कुछ भी अराजनीतिक नहीं है
विपिन चौधरी 198

प्रभुता लेखक की आकांक्षा नहीं
अनामिका अनु 214

मैं एक चिरंजीवी विद्यार्थी हूँ
उत्पल बैनर्जी 223

अपने प्रशंसकों से सावधान रहना चाहिए
नरेन्द्र पुण्डरीक 229

जहाँ सिनेमा या किताब ख़त्म होती है, एक साहसिक यात्रा शुरू होती है
स्व. विजयशंकर
अनु. शशिकान्त आचार्य 223

हमें बना बनाया रास्ता भूलना चाहिए
वर्तिका नंदा 238

स्त्री होने से कोई स्त्री-लेखक थोड़े ही हो जाता है
रेखा सेठी 243

आकाश में सुराख
गगन गिल की रचनाएँ

कविताएँ 254

कुछ गद्य कुछ कविताएँ 274

रिनपोछे मेरे एकलव्य-गुरु 280

यात्रा, यात्री और वृत्तांत 292

अन्तर्लय

दिल और दिमाग़ : गगन गिल
असग़र वजाहत 306

दूर से और पास से : गगन गिल
हरीश त्रिवेदी 310

जीवन में बिखरे अर्थ की खोज
अलका सरावगी 320

एक चुप्पी दोस्त
मधु बी जोशी 323

आत्मबल की आभा
शर्मिला जालान 326

गगन जी को निवेदित
वाजदा खान 334

आविर्भाव
यतीश कुमार 339

जो भी ईश्वर को देखता है, मर जाता है
प्रत्यक्षा 355

बारिश का सूखा कण्ठ
ऊषा दशोरा 360

बौद्ध मन्त्रों का जाप करता एक पीला गुलाब
पूनम अरोड़ा 366

सत्य और बुद्ध की सघन अनुभूतियाँ
पंकज शर्मा 371

संयम से संतुलन तक
अपूर्वा बैनर्जी 374

आत्म विस्मृति और आत्म निर्वासन के बीच एक संसार
प्रतिमा प्रसाद 379

कविता का उपनयन
सुनीता 386

समाहार

आत्मिक स्पन्दन की गूँज
पाण्डेय शशिभूषण शीतांशु 398

अक्का महादेवी- एक सम्भावना
राधावल्लभ त्रिपाठी 404

एक पिघला हुआ चेहरा
अमृता भारती 413

एकान्त का अरण्य
ए.अरविंदाक्षन 429

गगन गिल में अक्का महादेवी
माधव हाड़ा 433

चित्त में उतरती आवाज़
अरुण देव 437

यों ही एक बार
मनोज श्रीवास्तव 441

मैं अपने ईश्वर के हाथ में हूँ
प्रियदर्शन 446

नैसर्गिकता के साथ सहचर्य
दिव्या जोशी 451

कवि से कुछ अधिक
उषाकिरण खान 458

जैसे रेशम का कीड़ा बुनता है अपना घर
वंदना गुप्ता 461

पवित्र अनुभूतियों का तीर्थ
सुषमा गुप्ता 472

आदमी के भीतर आदमी
फतेहसिंह भाटी 478

हम हर दिन बदलते हैं
कुसुमलता सिंह 491

मैं जब तक आई बाहर : एक पठन
दीपक शर्मा 497

विषाद का बहता अंडरकरेंट
गोपाल माथुर 503

स्मृतियाँ एकान्त का अतल समन्दर है
चन्द्रकुमार 509

माँ तारा की गोद में...
नीलम जांगिड़ 513

दुःख की गति चक्रीय है
अनुपम सिंह 520

सभ्यता, इतिहास, परंपरा का संगम
सुधा सिंह 525

शताब्दियों की याद
सदानन्द शाही 536

नजर के आगे एक दीवार है
अरुण शीतान्श 540

उत्सुक, यायावर यात्री
विक्की आर्य 544

उसे कुछ भी नहीं चाहिए था
सुदीप्ति 548

अमूर्तता के कोलाज
दामोदर खड़से 558

मेरी बात

सहजता का सामीप्य

करीब पाँच छह माह पूर्व केदार न्यास, बाँदा के सचिव एवं माटी पत्रिका के प्रधान संपादक नरेन्द्र पुण्डरीक ने बताया कि *माटी* पत्रिका का यह अंक गगन गिल पर एकाग्र होगा। इससे मुझे बहुत खुशी हुई। गगनजी से मैं कभी मिली तो नहीं, लेकिन मैं उनकी कविताओं की पाठक जरूर रही। गगन गिलजी की चर्चा करते हुए पुण्डरीकजी ने कभी बताया था कि गगन गिल अकेली कवि हैं, जो केदार सम्मान लेने आईं, तो वे केदारजी के आवास पर गईं थी और उनके आवास की हालत को देखकर चिन्ता व्यक्त करते हुए कहा था कि मैं न्यास से यह इच्छा व्यक्त करती हूँ कि केदारजी के आवास को बिना कोई बदलाव किए इसी स्थिति में रखा जाए और यह आयोजन आगे से यहीं पर किया जाए, तो ज्यादा अच्छा रहेगा। उन्होंने यहाँ से जाने के बाद *जनसत्ता* एक लम्बा लेख लिखते हुए इस बात को लिखा भी था। यह सुनकर उनके प्रति मेरा लगाव और भी बढ़ गया।

गगन गिल की कविताओं में दुख की अनुभूति बहुत गहरी है, जिससे हमारा समय व समाज प्रभावित भी है। यह सही है कि हमारे समय की कविताएँ पाठ की विसंगति का शिकार हुईं। महत्त्वपूर्ण रचनाएँ भी इस दुख से वंचित नहीं हैं। इसलिए अब अनिवार्य बन चुका है कि कविता को उसकी नई परख और कसावट में देखा जाए न कि उसकी बुनावट में । प्रसंगवश हम गगनजी की कुछ कविताओं को देख सकते हैं। उनकी कविता है *चिट्ठी खटखटाती है दरवाजा बाहर से/ और तुमसे कुण्डी नहीं खुलती अपने एकान्त की/ तुम इतने अरसे से बन्द हो/ वहाँ जंग लग चुकी है कुण्डी में/ तुम इतने अरसे से बंद हो वहाँ कि तुम्हें यह भी नहीं मालूम / कि तुम भीतर से बन्द हो या बाहर से/ चिट्ठी दरवाजा खटखटाती है/ और तुम उसे कहते हो भीतर से-दरवाजा खोल लो बाहर से।*

इसे और आगे देखें- *कोई चिट्ठी तुमसे कभी यह नहीं पूछती/ तुम यों बन्द कैसे हो गए आखिर ?/ हर चिट्ठी उम्मीद के लिफाफे में बंद है- और लिफाफा फटा हुआ है।*

यहाँ कविता में जो स्वगत संवाद है, उसे पढ़ने की जरूरत है। संवाद की इस दशा को जितने काव्यमय तरीके से कहा जा रहा है, वह अपनी पूरी संवेदना के साथ हमें खींचता है। इसे पढ़ते हुए कहीं से नहीं लगता कि यह कविता का पाठ नहीं है *टैक्सचर* नहीं। इसलिए कविता को उसके गद्यात्मक विधान में रोपे जाने का यह नूतन अभिधान भी अलग तरह का सौन्दर्य बोध कराता है।